क्या कुपोषित राष्ट्र खिलाड़ी राष्ट्र हो सकता है?

महताब एस. बामजी

वर्ष 2010 के राष्ट्रमंडल (कॉमनवेल्थ) खेलों में भारतीय एथलीट्स ने कई मेडल्स जीते और एशियाड 2010 में भी भारतीय एथलीट्स का प्रदर्शन अच्छा रहा। इससे तो लगता है कि दुनिया के सबसे ज़्यादा कुपोषित देशों में शुमार होने के शोरगुल के बावजूद भारत खेलकूद में बढ़िया प्रदर्शन कर सकता है।

सेव दी चिल्ड्रन संस्था की एक रिपोर्ट के मुताबिक राष्ट्रमंडल के देश कम वज़न वाले बच्चों के लिहाज़ से एक समान हैं। रिपोर्ट के मुताबिक दुनिया के 64 प्रतिशत कम वज़न वाले बच्चे 54 राष्ट्रमंडल देशों में रहते हैं। यानी एकाध अपवाद को छोड़ दें, तो राष्ट्रमंडल खेल दरअसल ऐसे देशों के बीच प्रतिस्पर्धा है, जो दुनिया के सबसे कुपोषित देश हैं। लिहाज़ा ये खेल प्रदर्शन को आंकने का सर्वोत्तम पैमाना नहीं हो सकते। यही बात अधिकांश एशियाई देशों पर भी लागू होती है।

यह ज़रूर गर्व का विषय है कि भारत को इंग्लैण्ड, न्यूज़ीलैण्ड और कनाडा से ज़्यादा स्वर्ण पदक मिले हैं मगर भारत के आकार को देखते हुए यहां कहीं अधिक एथलीट्स पैदा होने की उम्मीद की जानी चाहिए। और यह नहीं भूलना चाहिए कि ओलंपिक में हमारी उपस्थिति ना के बराबर है। ओलंपिक में भारत को एकमात्र स्वर्ण पदक शूटिंग में मिला था। देश को जिम्नास्टिक्स में बढ़िया प्रदर्शन करना चाहिए, जहां सौ से ज़्यादा स्वर्ण पदक बंटते हैं और अच्छे मुकाबले होते हैं।

भारत को प्रायः चीन के साथ सबसे तेज़ी से बढ़ती अर्थ व्यवस्था का खिताब दिया जाता है। और देखा जाए तो आर्थिक मोर्चे पर हमारा प्रदर्शन अच्छा रहा है। मगर चीन के विपरीत भारत की प्राथमिकताएं गड़बड़ा गई हैं और मानव विकास सूचकांक तथा वैश्विक भूख सूचकांक से पता चलता है कि भारत स्वास्थ्य, पोषण, शिक्षा, जेंडर समानता जैसे सामाजिक क्षेत्रों में कई अन्य देशों से पीछे है। वर्ष 2010 के वैश्विक भूख सूचकांक में भारत को 122 विकासशील देशों में 67वां स्थान मिला है। देश के सारे राज्यों में भूख की स्थिति गंभीर है। 'दुनिया के कम वज़न वाले बच्चों में से 42 प्रतिशत भारत में निवास करते हैं।'

हमारे देश के नीतिकार और योजनाकार मानते हैं कि आर्थिक विकास के रिसाव के साथ ये सूचकांक सुधरेंगे। हमने इस परिकल्पना की जांच करते 63 साल बिता दिए हैं। वक्त आ गया है कि रणनीति बदली जाए।

जब भी खेलकूद के क्षेत्र में देश के घटिया प्रदर्शन का सवाल उठाया जाता है, तो इसके कई कारण गिना दिए जाते हैंः जैसे खेलकूद की संस्कृति का अभाव (क्रिकेट को छोड़कर), पर्याप्त प्रोत्साहन व पैसे का अभाव, प्रशिक्षण की अपर्याप्त सुविधाएं, छोटी उम्र में ही प्रतिभा को पहचानने में असमर्थता, स्कूलों में खेलकूद को बढ़ावा न दिया जाना, भ्रष्टाचार वगैरह। ये सारे कारण महत्त्वपूर्ण हैं, मगर यहां इस बुनियादी तथ्य को पूरी तरह अनदेखा किया जा रहा है कि एक कुपोषित राष्ट्र खेलकूद में आगे नहीं आ सकता।

भारत की बड़ी आबादी, खास तौर से गांवों (जहां प्रतिभा पाई जाती है) में रहने वाले लोग कुपोषित हैं और तंदुरुस्त नहीं हैं। खेलकूद, खासकर एथलेटिक्स के लिए मज़बूत शारीरिक बनावट की ज़रूरत होती है। भारतीय लोग मूलतः कुपोषण के चलते आम तौर पर छोटी कद-

काठी और कमज़ोर शारीरिक गठन वाले हैं। कहा जाता है कि यह एक कारण है जिसके चलते ऐसे खिलाड़ी अपना प्रदर्शन बेहतर करने के लिए प्रतिबंधित दवाइयों का इस्तेमाल करते हैं।

पोषण बगैर सेहत नहीं

अक्सर ऐसा होता है कि पोषण को स्वास्थ्य के मद में डाल दिया जाता है और स्वास्थ्य सम्बंधी हस्तक्षेप मूलतः संक्रामक व असंक्रामक बीमारियों पर केंद्रित रहते हैं। ये भी ज़रूरी हैं मगर उचित आहार और अच्छे पोषण के बिना न तो संक्रामक रोगों पर काबू पाया जा सकता है, न असंक्रामक रोगों पर।

पिछले कुछ वर्षों में मृत्यु दर को कम करने में कुछ सफलता मिली है। मगर कुपोषण की कठिन समस्या वहीं की वहीं है। लगभग 30 प्रतिशत शिशुओं का जन्म के समय वज़न कम होता है (2.5 कि.ग्रा. से कम)। शारीरिक कमज़ोरी के मापदंडों के आधार पर लगभग 50 प्रतिशत स्कूल-पूर्व बच्चे प्रोटीन-कैलोरी कुपोषण के शिकार हैं। पिछले एक दशक में स्थिति में कोई सुधार नहीं आया है।

बॉडी मास इंडेक्स (वज़न/कद का वर्ग) की कसौटी पर करीब-करीब 30 प्रतिशत वयस्क भी कुपोषित हैं। इसके अलावा सूक्ष्म पोषक तत्त्वों (विटामिन व खनिज तत्त्व) की भी बहुत कमी है। लौह की कमी वाला एनीमिया 50-70 प्रतिशत तक व्याप्त है तथा आयोडीन की कमी भी काफी व्यापक है। पोषण में जिन कमियों पर तत्काल ध्यान दिए जाने की ज़रूरत है उनमें विटामिन डी (पर्याप्त धूप के बावजूद), विटामिन बी, और जस्ता महत्त्वपूर्ण हैं। कुपोषण या अल्प-पोषण वृद्धि को प्रभावित करता है, प्रतिरक्षा को कमज़ोर करता है और दैनिक कामकाज पर असर डालता है, खेलकूद में प्रदर्शन की तो बात ही जाने दें, जिसके लिए ताकत, स्टेमिना व एकाग्रता की ज़रूरत होती है।

नोबेल विजेता अर्थ शास्त्रियों की एक पैनल ने विकास के लिए पोषण को उच्च प्राथमिकता दी है। विकास के लिए जिन सर्वोच्च दस प्राथमिकताओं को चुना गया, उनमें से पांच पोषण के क्षेत्र में हैं - सूक्ष्म पोषक तत्त्व पूर्ति, सूक्ष्म पोषक तत्त्व संवर्धन, जैव-संवर्धन, कृमि-उन्मूलन और स्कूल व सामुदायिक स्तर पर अन्य पोषण कार्यक्रम (कोपनहेगन सहमति, 2004)।

राष्ट्र संघ सहस्राब्दि लक्ष्यों की दिशा में भारत की प्रगति बहुत घटिया रही है। इनमें पहला लक्ष्य यह था कि अत्यंत गरीबी व भूख की स्थिति को समाप्त किया जाएगा। चीन और यहां तक कि वियतनाम भी इस लक्ष्य से काफी आगे निकल गए हैं।

खाद्य सुरक्षा या पोषण सुरक्षा

पोषण सुरक्षा हेतु उम्र के लिहाज़ से उपयुक्त संतुलित भोजन, साफ पेयजल, सुरक्षित पर्यावरण और सबके लिए प्राथमिक स्वास्थ्य सेवा के प्रति जागरूकता तथा भौतिक, आर्थिक व सामाजिक पहुंच हासिल होनी चाहिए। पोषण साक्षरता राजनीतिज्ञों, योजनाकारों, प्रशासकों, मीडिया, स्वास्थ्य, कृषि व अन्य पेशेवरों वगैरह सबके लिए ज़रूरी है। आम जनता को भी समस्या की गंभीरता को समझकर पोषण सुरक्षा की योजना बनानी चाहिए, जो खाद्य सुरक्षा से कहीं बड़ी चीज़ है।

खाद्य सुरक्षा का अर्थ अक्सर राष्ट्रीय स्तर पर अनाज (गेहूं और चावल के पर्याप्त भंडार) से लगाया जाता है, न कि परिवार व व्यक्ति के स्तर पर संतुलित आहार सुनिश्चित करने से। संतुलित आहार में अनाज, दालों, सब्ज़ियों, फलों और जंतुओं से प्राप्त वस्तुओं - दूध, अंडे, मांस, मछली वगैरह - की उचित मात्रा होनी चाहिए। महीन अनाज (गेहूं, चावल) के अलावा मोटे अनाज के उपभोग को भी बढ़ावा दिया जाना चाहिए; ये पोषण की दृष्टि से बढ़िया होते हैं और रेशा पदार्थ के अच्छे स्रोत हैं। समर्थन मूल्य नीति के चलते इन अनाजों के पोषण मूल्य की उपेक्षा हो रही है। मोटे अनाज के उत्पादन के लिए पानी कम लगता है और ये जलवायु परिवर्तन के प्रति ज़्यादा प्रतिरोधी हैं। कृषि अनुसंधान के ज़रिए इनकी उत्पादकता को बढ़ाया जाना चाहिए। प्रायोगिक उपज व खेत पर उपज के बीच जो 2-3 गुना का अंतर है उसे पाटने की ज़रूरत है ताकि इन अनाजों को भी किसान के लिए आर्थिक रूप से स्वीकार्य बनाया जा सके।

हाल में, विश्व बैंक समर्थित राष्ट्रीय कृषि नवाचार परियोजना में मोटे अनाजों पर थोड़ा ज़्यादा ध्यान दिया जा रहा है।

कुपोषण और बीमारियां

कुपोषण-संक्रमण का एक दुष्चक्र होता है। कुपोषण की वजह से प्रतिरक्षा कमज़ोर पड़ जाती है, जिसके चलते शरीर संक्रमणों के प्रति भेद्य हो जाता है और जब संक्रमण होता है तो वह शरीर में पोषक तत्त्वों की कमी पैदा कर देता है। तेज़ परिवर्तन के दौर से गुज़र रहे भारत जैसे देश दोहरा बोझ झेल रहे हैं - परिवर्तन-पूर्व की बीमारियां (जैसे कुपोषण व संक्रामक रोग) और परिवर्तन-उपरांत की बीमारियां (जैसे क्षयकारी बीमारियां, मोटापा वगैरह जिनका सम्बंध मधुमेह, उच्च रक्तचाप और हृदय-रक्तवाहिनी रोगों से होता है, कैंसर और गठिया)। भारत मधुमेह की विश्व राजधानी बन गया है। अन्य देशों की अपेक्षा भारतीयों को हृदय-रक्तवाहिनी रोग जल्दी घेरते हैं। हाल के वर्षों में हुए अनुसंधान से पता चला है कि भ्रूण अवस्था में कुपोषण का सम्बंध उपरोक्त उम्र-आधारित बीमारियों से होता है। भ्रूण अवस्था में पोषण की कमी भ्रूण के प्रोग्रामिंग और शरीर के संगठन को प्रभावित करती है।

कुपोषित मां के बच्चों का वज़न कम होने की संभावना ज़्यादा होती है। ऐसे बच्चों में शरीर में वसा की मात्रा सुपोषित मांओं के बच्चों से अधिक होती है। बाद के जीवन में यदि सुस्त जीवन शैली, ज़्यादा वसा, कम रेशे वाला परिष्कृत भोजन मिले तो ऐसे बच्चों को मोटापे, मधुमेह और हृदय रोगों की सौगात देता है। मोटापे से गठिया भी ज़्यादा गंभीर हो जाता है।

कई पीढ़ियों से चले आ रहे इस दुष्चक्र को तोड़ने के लिए बचपन से ही लड़कियों के पोषण व स्वास्थ्य पर ध्यान देना होगा। जन्म के समय कम वज़न वाले बच्चों को पहले साल में ही पोषण पुनर्वास की ज़रूरत होती है। इसके लिए स्तनपान और 6 माह बाद पूरक आहार जैसे आसान उपाय ज़रूरी होते हैं। यह काफी कम लागत का हस्तक्षेप है जिसके लिए मात्र व्यापक जागरूकता की ज़रूरत होगी। मगर इसका मतलब यह कदापि नहीं है कि इतना करने के बाद बढ़िया पोषण की ज़रूरत नहीं है। किशोर लड़कियों, गर्भवती स्त्रियों और धात्री स्त्रियों को पोषण की विशेष ज़रूरत होती है।

भारतीय भोजन और कुपोषण

दक्षिण भारत के किसी गांव जाकर किसी बच्चे को भोजन करते देखिए। उसका भोजन चावल के ढेर और थोड़ी-सी चटनी या सब्ज़ी या दाल से बना होगा। उत्तर भारत में चावल की जगह रोटी ले लेगी। राष्ट्रीय पोषण संस्थान द्वारा संचालित राष्ट्रीय पोषण निगरानी ब्यूरो द्वारा भारतीय चिकित्सा अनुसंधान परिषद के तत्वावधान में किए गए सर्वेक्षण तथा कुछ अन्य सर्वेक्षण दर्शाते हैं कि भारतीय भोजन सूक्ष्म पोषक तत्त्वों (विटामिन व खनिज) की दृष्टि से अपर्याप्त होता है। इसके अलावा, परिवार के भोजन में स्कूल-पूर्व बच्चों का भोजन सबसे कमज़ोर होता है क्योंकि उनकी पोषण सम्बंधी ज़रूरतों के बारे में जागरूकता बहुत कम होती है और मांओं के पास इतना समय नहीं होता कि उन्हें थोड़ा-थोड़ा कई बार खिलाएं।

तमाम सब्ज़ियों में से हरी पत्तेदार सब्ज़ियां सूक्ष्म पोषक तत्त्वों का खज़ाना हैं। इन्हें उगाना आसान है और ये साल भर मिलती हैं और काफी विविधता भी होती है। उद्यान विशेषज्ञों ने इस कीमती संसाधन पर बहुत कम ध्यान दिया है। संतरे, पीली सब्ज़ियां और फल (गाजर, पपीता, पीला कद्दू, आम) प्रोविटामिन ए के अच्छे स्रोत हैं। खास तौर से नींबू वर्ग के फल, आंवला, अमरूद और टमाटर विटामिन सी के स्रोत हैं, जो ऑक्सीकरण-रोधी है। विटामिन सी लौह के अवशोषण में मददगार होता है। थोड़े से ज्ञान व समझ के साथ कृषि को पोषण-उन्मुखी बनाया जा सकता है। सब्ज़ियां व फल पादप-रसायनों के भी अच्छे स्रोत हैं। ये हमें उम्र के साथ होने वाली क्षयकारी बीमारियों से बचाते हैं।

स्वास्थ्य सम्बंधी सुविधाएं

यूनिसेफ की स्टेट ऑफ दी वर्ल्ड्र्स चिल्ड्रन, 2009 रिपोर्ट के मुताबिक पेयजल तक पहुंच के मामले में भारत ने प्रगति की है। 2006 में 80 प्रतिशत आबादी को साफ

पेयजल प्राप्य था। मगर शौच व्यवस्था के मामले में स्थिति इतनी अच्छी नहीं है। 2006 में मात्र 28 प्रतिशत परिवारों को साफ शौचालय उपलब्ध थे। ऐसे पर्यावरण का खामियाज़ा सेहत को भुगतना होता है। भारत में खास तौर से ग्रामीण इलाकों में शौचालय का उपयोग बहुत कम है।

इसके अलावा स्वास्थ्य सेवा तक पहुंच भी असंतोषप्रद है। बड़ी संख्या में सरकारी अस्पतालों, प्राथमिक स्वास्थ्य केंद्रों और उपकेंद्रों के बावजूद निजी अस्पतालों व डॉक्टरों का उपयोग ज़्यादा किया जाता है क्योंकि एक एहसास बन गया है कि ये बेहतर हैं।

रास्ता किधर है?

अव्वल तो कुपोषण को एक प्राथमिकता माना जाना चाहिए जिसे युद्ध स्तर पर संबोधित करना है। मगर इस मामले में यह तो नहीं कहा जा सकता कि सरकार या वैज्ञानिक समुदाय निष्क्रिय है। एकीकृत बाल विकास कार्यक्रम के तहत पूरक आहार और हाल में शुरू की गई मध्यान्ह भोजन योजना जैसे व्यापक कार्यक्रम शुरू किए गए हैं और इनमें पोषण का निर्धारण वैज्ञानिक दृष्टि से किया गया है। बदकिस्मती से, इनमें से किसी भी कार्यक्रम में बच्चों के पोषण स्तर में सुधार को एक लक्ष्य के रूप में व्यक्त नहीं किया गया है। मध्यान्ह भोजन का घोषित लक्ष्य स्कूल में उपस्थिति बढ़ाना है, जो इसने कम से कम कुछ राज्यों में प्राप्त भी कर लिया लगता है। एकीकृत बाल विकास योजना का बच्चों के पोषण स्तर पर अपेक्षित असर नहीं हुआ है। एक कारण यह है कि सबसे ज़रूरतमंद बच्चे (6-24 माह) इससे दूर रह जाते हैं क्योंकि जो खाना घर ले जाया जाता है वह पूरे परिवार में बंट जाता है। इस मामले में कुछ कल्पनाशीलता दिखाने की ज़रूरत है। कुछ राज्यों में तो आंगनवाड़ियां चलती ही नहीं हैं।

सूक्ष्म पोषक तत्त्वों की कमी से निपटने के चार तरीके हैं: औषधि विधि जिसमें गोलियां/सिरप का उपयोग किया जाता है; भोजन में संवर्धन की विधि, जैव संवर्धन की विधि और भोजन में विविधता लाने की विधि।

एनीमिया निवारण कार्यक्रम में गर्भवती स्त्रियों, स्कूल-पूर्व बच्चों, और अब किशोर लड़कियों को लौह-फॉलिक एसिड की पूरक खुराक दी जाती है, मगर यह कार्यक्रम असफल रहा है। इसमें प्रमुख समस्या क्रियांवयन और अनुपालन की है। सौभाग्य की बात है कि विटामिन ए की कमी से होने वाला अंधत्व अब एक जन स्वास्थ्य समस्या नहीं रह गई है। यह इसके बावजूद है कि विटामिन ए की पूर्ति का कार्यक्रम अन्य कार्यक्रमों की ही तरह दोषपूर्ण रहा है। कई पोषण वैज्ञानिकों ने इस कार्यक्रम को बंद कर देने की सिफारिश की है मगर अभी भी हल्के रूप में विटामिन ए की कमी मौजूद है, और विटामिन ए का सेहत पर असर सिर्फ आंखों तक सीमित नहीं है; लिहाज़ा इस कार्यक्रम को चालू रखना चाहिए। प्रशासनिक और सामाजिक-सांस्कृतिक बाधाओं को पहचान कर दूर किया जाना चाहिए। विभिन्न विभागों के बीच समन्वय और गैर सरकारी संगठनों व निजी क्षेत्र के साथ साझेदारी से इसे बेहतर बनाया जा सकता है।

भारत में सफलता की एक कहानी आयोडीन की कमी की वजह से होने वाले घेंघा रोग में आई कमी है। यह सफलता आयोडीन युक्त नमक लागू करने के बाद मिली है। हाल ही में राष्ट्रीय पोषण संस्थान ने लौह व आयोडीन युक्त नमक तैयार किया है। इसके उत्पादन का सरकारी आदेश जारी हो चुका है। जल्दी ही आयोडीन युक्त नमक का स्थान यह दोहरा संवर्धित नमक ले सकता है ताकि लौह व आयोडीन दोनों की कमी से निपटा जा सके। संवर्धन के अन्य तरीके भी हैं: जैसे अनाजों में सूक्ष्म पोषक तत्त्व बढ़ाना, जैसा कि कई देशों में किया जाता है। बहरहाल, ये उपाय रोकथाम के उपाय हैं और मध्यम तथा गंभीर एनीमिया के मामलों में कारगर नहीं होंगे, उनका तो उपचार ही करना होगा।

जैव संवर्धन एक बीज-आधारित तरीका है जिसमें जर्मप्लाज़्म को खनिज या विटामिन से समृद्ध बनाया जाता है। इसके लिए पारंपरिक संकरीकरण तकनीकों का इस्तेमाल किया जाता है। किसी उच्च उत्पादन वाली किस्म का संकरण सूक्ष्म पोषक तत्त्व से समृद्ध किस्म से करवाया जाता है। इस प्रक्रिया को त्वरित बनाने के लिए पहचान-चिन्ह आधारित आणविक ब्रीडिंग का सहारा लिया जा सकता है। आणविक ब्रीडिंग के उपयोग से लौह व जस्ता समृद्ध चावल, गेहूं,

ज्वार वगैरह तैयार किए गए हैं। इसी प्रकार से शकरकंद व कसावा में प्रोविटामिन ए की मात्रा बढ़ाई गई है। यह तकनीक विवादास्पद नहीं है और इससे प्राप्त उत्पादों का जल्दी से मैदानी परीक्षण करके जारी किया जाना चाहिए। बीज-आधारित तरीके टिकाऊ व सस्ते हैं, बशर्ते कि बीज कंपनियों को इनका दोहन करने की अनुमति न दी जाए।

दूसरा तरीका जिनेटिक इंजीनियरिंग का है, जिसमें कोई मनचाहा जीन किसी अन्य प्रजाति में आरोपित किया जाता है। इस तकनीक में अपार संभावनाएं हैं मगर इसका उपयोग सावधानीपूर्वक किया जाना चाहिए ताकि पर्यावरण व स्वास्थ्य की सुरक्षा सुनिश्चित की जा सके।

अलबत्ता, सबसे कारगर और सबसे कम आज़माई गई विधि गांव व परिवार के स्तर पर खाद्यान्न सुरक्षा की विकेंद्रित नियोजन की गांधीवादी विधि है। इसमें घर पर लगे बगीचे, आंगन में मुर्गियां पालना, ढोर पालना, मत्स्य तालाब बनाना वगैरह शामिल हैं। मोटे अनाज और दालों के उत्पादन को बढ़ावा देना होगा। क्यूब जैसे देशों में तो शहरी इलाकों में भी घरों से लगी ज़मीन पर खाद्य उत्पादन को सफलतापूर्वक आज़माया गया है। भंडारण व प्रोसेसिंग की अपर्याप्त सुविधाओं के चलते भारी मात्रा में खाद्य पदार्थ नष्ट होते हैं। इस पर तत्काल ध्यान देने की ज़रूरत है।

कहां है पोषण मिशन?

देश में चल रहे तमाम मिशन्स (जैसे राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा मिशन, राष्ट्रीय उद्यानिकी मिशन, जिसका ज़ोर आमदनी व निर्यात पर है, ग्रामीण स्वास्थ्य मिशन, जिसका ज़ोर संक्रामक व असंक्रामक रोगों पर है) में से किसी के भी घोषित लक्ष्यों में पोषण सुरक्षा नहीं है और न ही इसे नापने की कोई कसौटी है। खाद्य सुरक्षा विधेयक - जो राष्ट्रीय सलाहकार परिषद की खाद्य सुरक्षा सम्बंधी सिफारिशों का बहुत कमज़ोर रूप है - में मात्र अनाज व मोटे अनाज की बात की गई है। मोटे अनाज का समावेश प्रशंसनीय है मगर जैसा कि पहले कहा गया था, खाद्य सुरक्षा के लिए दालों, सब्ज़ियों, फलों, जंतु स्रोतों से प्राप्त भोजन, तेल वगैरह जैसे खाद्य पदार्थों की ज़रूरत होती है। बहरहाल यह विधेयक सही दिशा में एक कदम है। यदि अनाज खरीदने के बोझ से थोड़ा-सा पैसा भी मुक्त किया जा सके तो अन्य खाद्य पदार्थ खरीदे जा सकेंगे। सार्वजनिक वितरण प्रणाली में कम से कम दालें, मोटा अनाज और तेल को शामिल किया जाना चाहिए। कुछ राज्यों में ऐसा किया भी जा रहा है।

राष्ट्रीय पोषण नीति (1993), राष्ट्रीय पोषण योजना व कार्यक्रम (1995) और राष्ट्रीय पोषण मिशन (2001) जैसे कई कार्यक्रम कागज़ों पर ही रहे हैं। हाल में, एम.एस. स्वामीनाथन के नेतृत्व में टिकाऊ पोषण सुरक्षा हेतु गठबंधन ने एक कार्ययोजना के लिए कुछ सिफारिशें प्रस्तुत की हैं। भारतीय राष्ट्रीय विज्ञान अकादमी ने हाल में दो पर्चे जारी किए हैं: 'भारत के लिए पोषण सुरक्षा - मुद्दे और आगे का रास्ता' (2009) तथा 'भारत के लिए सूक्ष्म पोषण सुरक्षा - अनुसंधान व कार्रवाई की प्राथमिकताएं' (2011)। ये पर्चे काफी वैज्ञानिक विचार-विमर्श के बाद तैयार किए गए हैं। उम्मीद करें कि इनकी सिफारिशें सुनी जाएंगी और उन पर अमल किया जाएगा। प्रधानमंत्री ने कुपोषण को एक अभिशाप बताया है और पोषण चुनौती का सामना करने हेतु एक राष्ट्रीय परिषद का गठन किया है। इसमें विभागों के बीच समन्वय की कुछ कोशिश की गई है मगर इसमें अधिकांश सदस्य राजनीतिज्ञ और प्रशासक ही हैं।

उम्मीद करें कि यह कहानी भी धमाके से शुरू होकर फुस्स न हो जाए। जब तक लोगों को पर्याप्त पोषण नहीं मिलता तब तक भारत खेलकूद में आगे बढ़ने की उम्मीद नहीं कर सकता। आइए, अपने युवाओं की ऊर्जा को हिंसा की बजाय खेलकूद में लगाएं। दवा खाकर प्रदर्शन बढ़ाने की घटनाएं कोई गर्व का विषय नहीं हैं। ***(स्रोत फीचर्स)***